देवकीनन्दन प्रसाद

बनाम

बिहार राज्य और कुछ अन्य

(Devkinandan Prasad

Vs.

The State of Bihar and others)

(4 मई, 1971)

(मुख्य न्यायाधिपति एस० एम० सीकरी, न्यायाधिपति जी० के० मित्तर, सी० ए० वैद्यलिंगम्, पी० जगनमोहन रेड्डी और आई० डी० दुआ)

भारत का संविधान, अनुच्छेद 19(1) (च), और 31(1)—सरकारी सेवक का पेंशन प्राप्त करने का अधिकार 'सम्पत्ति' है और राज्य को कार्यपालिक आदेश द्वारा इसे रोक रखने की शक्ति प्राप्त नहीं है—पेंशन दान नहीं है जो सरकार की मर्जी और प्रसाद पर संदेय हो—पेंशन पाने का अधिकार सरकारी सेवक को प्राप्त एक मूल्यवान अधिकार है—सरकारी सेवक को पेंशन पाने का अधिकार राज्य के आदेश पर नहीं बल्कि पेंशन-नियमों के बल पर प्राप्त है—यदि सरकार पेंशन कम करने या रोक रखने का मनमाना आदेश पारित करती है तो उससे संविधान के अनुच्छेद 19(1) (च) और 31(1) द्वारा गारण्टी दिए गए सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकारों का उल्लंघन होता है।

बिहार सर्विस कोड—नियम 46 और 76—अवचार का दोषी होने पर सरकारी सेवक पेंशन पाने का हकदार नहीं है (नियम 46) और इजाज़त लेकर या इजाज़त के बिना पांच वर्षों तक अपनी ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित रहने पर वह अवचार का दोषी होता है और उसकी सेवा स्वतः समाप्त हो जाती है (नियम 76) किन्तु ऐसी निरन्तर अनुपस्थिति में यदि कोई विघ्न पड़ जाता है तो उसकी सेवा स्वतः समाप्त नहीं होती।

संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन इस रिट पिटीशन में पिटीशनर ने प्रत्यर्थियों के विरुद्ध सर्शियोरारी या किसी ऐसे अन्य समुचित रिट, निदेश या आदेश के जारी करने की प्रार्थना की है जिससे कि उसके विरुद्ध पारित तारीख 22 सितम्बर, 1953, 5 मार्च, 1960, 5 अगस्त, 1966 और 12 जून, 1968 वाले चारों आदेश अभिखण्डित कर दिए जाएं। पिटीशनर ने यह भी प्रार्थना की है कि मैन्डेमस के रिट के रूप में एक रिट जारी किया जाए जिसमें प्रत्यर्थियों को यह निदेश दिया जाए कि वे पिटीशनर को 58 वर्ष की आयु से

सेवा निवृत्त मानें और उसे वह पेंशन संदत्त करें, जिसका वह हकदार है। यद्यपि चारों आदेशों को अभिखण्डित करने की प्रार्थना की गई है, किन्तु पिटीशनर की शिकायत तारीख 2 सितम्बर, 1953 और 5 मार्च, 1960 वाले आदेश के सम्बन्ध में है।

1 सितम्बर, 1928 को पिटीशनर ने पटना प्रैक्टिसिंग स्कूल में सहायक शिक्षक (असिस्टेंट टीचर) के रूप में सेवा प्रारम्भ की थी और 31 मई, 1934 से वह अधीनस्थ शिक्षा सेवा (सबआर्डिनेट एजूकेशनल सर्विस) के निम्न श्रेणी (लोअर डिवीजन) में विद्यालय अधीनस्थ निरीक्षक सब इंस्पेक्टर के रूप में प्रोन्नत किया गया था। आगे चल कर पिटीशनर उच्च श्रेणी (अपर डिवीजन) में विद्यालय उपनिरीक्षक (डिप्टी इन्स्पेक्टर आफ स्कूल्स) के रूप में प्रोन्नत किया गया और बिहार के छोटा नागपुर डिवीजन के सिंहभूम जिले में सराईकेला में 1 नवम्बर, 1949 से नियुक्त किया गया। सराईकेला के विद्यालय उपनिरीक्षक के रूप में पिटीशनर की सेवाओं को ज्येष्ठ आफिसरों ने, जिनके अन्तर्गत शिक्षा निदेशक (डाइरेक्टर आफ पब्लिक इंस्ट्रक्शन) भी था, संतोषजनक पाया और इसलिए उसे सामुदायिक परियोजना में शिक्षा अधिकारी (एजूकेशन आफिसर) के ज्येष्ठ पद पर नियुक्त करने को सिफारिश की। 1951 के अन्त में उसे मानभूम जिले के पुरुलिया स्थान में अन्तरित कर दिया गया। इसके पश्चात् पिटीशनर को मई, 1953 में या इसके आसपास बेतिया अन्तरित कर दिया गया। बेतिया में पिटीशनर ने शिक्षा निदेशक (डाइरेक्टर आफ पब्लिक इन्स्ट्रक्शन) के तारीख 2 सितम्बर, 1953 वाले आदेश की प्रति प्राप्त की थी जिसमें यह निदेश दिया गया था कि श्री कन्हैया लाल, जिला विद्यालय निरीक्षक (डिस्ट्रिक्ट इन्स्पेक्टर आफ स्कूल्स) की रिपोर्ट के आधार पर, पिटीशनर की चरित्र-पुस्तिका (कैरेक्टर रोल) में परिनिंदा अभिलिखित की गई है। पिटीशनर के कथनानुसार श्री कन्हैया लाल, जिला विद्यालय निरीक्षक, पिटीशनर से वैमनस्य रखते थे। पिटीशनर ने तारीख 2 सितम्बर, 1953 वाले आदेश को रद्द कराने के लिए कोशिश की किन्तु वह असफल रहा। कतिपय अभिकथनों के आधार पर पिटीशनर को 6 फरवरी, 1954 से निलम्बित कर दिया गया और बेतिया के शिक्षा उपनिरीक्षक के कर्त्तव्यभार से मुक्त कर दिया। 16 मार्च, 1954 को एक आरोप पत्र पिटीशनर के नाम जारी किया गया कि वह दोषी पाया गया है। किन्तु आगे चल कर जांच की कार्यवाहियां अपास्त कर दी गईं और एक नई जांच का आदेश दिया गया। इसके परिणामस्वरूप निलम्बन का आदेश रद्द कर दिया गया। किन्तु उसके तुरन्त बाद ही एक नई जांच की गई जिसमें वह पुनः दोषी पाया गया जैसा कि तारीख 22 सितम्बर, 1958 के जांच अधिकारी की रिपोर्ट से प्रकट होता है। अनुशासन प्राधिकारी ने, जो शिक्षा निदेशक था, 5 मार्च, 1960 को एक आदेश पारित किया जिसमें उसने जांच अधिकारी द्वारा पिटीशनर के विरुद्ध अभिलिखित निष्कर्ष को सही माना और यह अभिनिर्धारित किया कि पिटीशनर अपने पद से अधीनस्थ शिक्षा सेवा के निम्न श्रेणी के पद पर दण्ड के रूप में प्रतिवर्तित कर दिया जाए और यह भी निदेश दिया गया कि उसकी व्यक्तिगत चरित्र पुस्तिका (पर्सनल करेक्टर रोल) में परिनिन्दा की प्रविष्टि अभिलिखित कर दी जाए। पिटीशनर ने पटना के मुन्सिफ, III के न्यायालय में 1961 का हकवाद संख्या 86 फाइल किया था जिसमें उसने तारीख 5 मार्च, 1960 वाले आदेश को चुनौती दी थी और उन जांच कार्यवाहियों को चुनौती दी थी जिनके आधार पर उक्त आदेश पारित किया गया था। उसने इस वाद में इन आदेशों को अवैध होने की घोषणा करने

की मांग की थी। यद्यपि प्रत्यर्थियों ने इस वाद का विरोध किया था, किन्तु अन्ततः इसकी डिक्री 11 अप्रैल, 1963 को कर दी गई। प्रत्यर्थियों ने पटना के अधीनस्थ न्यायाधीश (सब-जज) के न्यायालय में 1963/64 की अपील संख्या 132/24 फाइल की जिसमें उन्होंने मुन्सिफ की डिक्री को चुनौती दी। 24 जून, 1964 को यह अपील मंजूर कर ली गई जिसके परिणामस्वरूप पिटीशनर का 1961 का वाद संख्या 86 खारिज हो गया। पिटीशनर के 1964 की द्वितीय अपील संख्या 646 को उच्च न्यायालय ने 4 मई, 1967 को खारिज कर दिया।

प्रत्यर्थियों ने तारीख 12 जून, 1968 वाले उस आदेश के बारे में, जिसमें कि और जिसके द्वारा पिटीशनर को यह इत्तिला दी गई थी कि विभाग उसे पेंशन मंजूर करने के लिए पेंशन नियमों के नियम 46 के अधीन असमर्थ था, यह कथन किया है कि यह आदेश विधिमान्य है और उक्त नियम की परिधि के अन्तर्गत आता है। प्रत्यर्थियों के कथनानुसार तारीख 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश पिटीशनर को सेवा से इस कारण हटाने का आदेश है क्योंकि पिटीशनर 5 वर्ष से अधिक समय तक अपनी ड्यूटी पर उपस्थित नहीं था और यह कार्य स्वतः अवचार है। इसलिए पिटीशनर किसी पेंशन का दावा करने के लिए हकदार नहीं है। इस आशय का भी प्रकथन किया गया है कि आक्षेपित आदेशों द्वारा पिटीशनर के किसी मूल अधिकार के उल्लंघन का प्रश्न नहीं उठता और इसलिए रिट पिटीशन मंजूर नहीं किया जा सकता। पिटीशनर ने एक प्रत्युत्तर फाइल किया है जिसमें उसने यह बताया है कि तारीख 5 अगस्त, 1966 वाले आदेश में और प्रत्यर्थियों की ओर से शिक्षा सहायक निदेशक द्वारा फाइल किए प्रतिशपथपत्र में दी गई तारीखों में अन्तर है। पिटीशनर का कहना है कि इस कालावधि की संगणना या तो आदेश में दी गई तारीखों के अनुसार या प्रतिशपथपत्र में दी गई तारीखों के अनुसार, चाहे जिस रीति से भी की जाए, नियम 76 लागू नहीं होता है क्योंकि वह 5 वर्षों से अधिक समय तक के लिए अपनी ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित नहीं था। प्रत्यर्थियों के कथनानुसार बिहार सर्विस कोड 1952 (जिसे इसके आगे सर्विस कोड के रूप में निर्दिष्ट किया गया है) के नियम 76 के आधार पर तारीख 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश पारित किया गया था इसलिए संविधान के अनुच्छेद 311 का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है।

इसमें विचारणीय प्रश्न यह है कि तारीख 5 अगस्त, 1966 और 12 जून, 1968 वाले आदेश विधिमान्य हैं या नहीं। पिटीशनर का कहना यह है कि 5 अगस्त, 1966 वाले आदेश द्वारा वह सेवा से हटाया गया था और यह आदेश अनुच्छेद 311 का अतिक्रमण कर के पारित किया गया था। प्रत्यर्थियों ने यह बात स्वीकार की है कि यह वही आदेश है जिसके द्वारा पिटीशनर सेवा से हटाया गया था किन्तु उन्होंने यह दलील दी है कि यह मान भी लिया जाए कि उक्त आदेश अनुच्छेद 311 का अतिक्रमण करके पारित किया गया था, तो भी उक्त परिस्थितियों में पिटीशनर को यह अधिकार प्राप्त नहीं है कि वह इस न्यायालय से अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन करे। पिटीशनर का पक्षकथन यह है कि पेंशन प्राप्त करने के लिए उसका अधिकार 'संपत्ति' है और प्रत्यर्थियों द्वारा केवल इन्कार या रद्द किए जाने से इस अधिकार की सम्पत्ति का रूप समाप्त नहीं हो जाता।

अभिनिर्धारित— पेंशन प्राप्त करने का पिटीशनर का अधिकार अनुच्छेद 31 (1) के अधीन 'सम्पत्ति' है और राज्य को केवल कार्यपालिक आदेश द्वारा इसे रोक रखने की कोई शक्ति प्राप्त नहीं है। इसी प्रकार उक्त दावा अनुच्छेद 19(1)(च) के अधीन भी 'सम्पत्ति' है और इसे अनुच्छेद 19 के उप-अनुच्छेद (5) द्वारा कोई व्यावृत्ति प्राप्त नहीं है। इसलिए परिणाम यह निकलता है कि पिटीशनर को पेंशन प्राप्त करने के अधिकार से वंचित करने का तारीख 12 जून, 1968 वाला आदेश संविधान के अनुच्छेद 19(1)(च) और 31 (1) के अधीन उस के मूल अधिकारों को प्रभावित करता है। (पैरा 16 और 36)

(2) पेंशन की मंजूरी प्राधिकारियों द्वारा इस आशय का आदेश पारित किए जाने पर निर्भर नहीं है। यह हो सकता है कि सेवा की कालावधि और अन्य सुसंगत बातों पर ध्यान देकर मिलने वाली पेंशन की रकम के प्रयोजन के लिए प्राधिकारी इस आशय का आदेश पारित करें किन्तु आफिसर को पेंशन प्राप्त करने का अधिकार उक्त आदेश के द्वारा नहीं होता है बल्कि नियमों के बल पर होता है। पिटीशनर जैसे व्यक्तियों के लिए नियमों में वर्णित परिस्थितियों में पेंशन प्राप्त करने का अधिकार स्पष्ट रूप से मान्य है। (पैरा 32)

(3) पेंशन ऐसा दान नहीं है जो सरकार की मर्जी और प्रसाद पर संदेय हो बल्कि पेंशन का अधिकार सरकारी सेवक में निहित एक मूल्यवान अधिकार है। (पैरा 34)

(4) आदेश में दी गई तारीखों के मुताबिक पिटीशनर 1 मार्च, 1960 से 5 वर्षों से अधिक समय तक अपनी ड्यूटी पर नहीं था और वह 2 मार्च, 1965 से सरकारी नियोजन में नहीं रहा। पिटीशनर का कहना यह है कि पांच वर्ष की कालावधि 10 मार्च, 1965 को पूरी नहीं होती। प्रत्यर्थियों के कहने के मुताबिक भी पिटीशनर केवल 11 मार्च, 1960 से 5 वर्षों से अधिक समय तक ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित था और वह 2 मार्च, 1965 से सरकारी नियोजन में नहीं रहा। किसी और बात के बिना भी यह आसानी से कहा जा सकता है कि यह संगणना पूर्णतया गलत है और पिटीशनर को 5 वर्ष से अधिक समय तक ड्यूटी से अनुपस्थित नहीं माना जा सकता। (पैरा 19)

अनुमोदित निर्णय

		पैरा सं०
[1968]	(1968) 3 एस० सी० आर० 489 : मध्य प्रदेश राज्य बनाम रानोजीराव शिन्दे और एक अन्य (State of Madhya Pradesh *Vs*. Ranojirao Shinde and Another);	35
[1967]	आई० एल० आर० 1967 **पंजाब और हरियाणा** 28 : के० आर० एरि बनाम पंजाब राज्य (K. R. Erry *Vs*. The State of Punjab);	34
[1966]	1 एस० सी० आर० 825 : जयशंकर बनाम राजस्थान राज्य (Jai Shanker *Vs*. State of Rajasthan);	24

		पैरा
[1965]	आई० एल० आर० 1965 पंजाब 1 : **भारत संघ बनाम भगवंत सिंह** (Union of India *Vs.* Bhagwant Singh);	33
[1962]	ए० आई० आर० 1962 पंजाब 503 : **भगवंत सिंह बनाम भारत संघ** (Bhagwant Singh *Vs.* Union of India);	33

आरम्भिक अधिकारिता : 1968 का सं० 217 वाला रिट पिटीशन ।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए ।

पिटीशनर की ओर से सर्वश्री विशन नारायण, बी० बी० सिन्हा, एस० एन० मिश्र, एस० एस० जौहर और के० के० सिन्हा

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री बी० पी० झा

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति सी० ए० वैद्यलिंगम् ने दिया ।

न्यायाधिपति वैद्यलिंगम्—

संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन इस रिट पिटीशन में पिटीशनर ने प्रत्यर्थियों के विरुद्ध सर्शियोरारी या किसी ऐसे अन्य समुचित रिट, निदेश या आदेश के जारी करने की प्रार्थना की है जिससे कि तारीख 22 सितम्बर, 1953, 5 मार्च, 1960, 5 अगस्त, 1966 और 12 जून, 1968 वाले चारों आदेश अभिखण्डित कर दिए जाएं । पिटीशनर ने यह भी प्रार्थना की है कि मैंडेमस के रिट के रूप में एक रिट जारी किया जाए जिसमें प्रत्यर्थियों को यह निदेश दिया जाए कि वे पिटीशनर को 58 वर्ष की आयु से सेवा निवृत्त माने और उसे वह पेंशन संदत्त करे, जिसका वह हकदार है ।

2. यद्यपि चारों आदेशों को अभिखण्डित करने की प्रार्थना की गई है, जैसा कि हम सम्यक् अनुक्रम में दर्शित करेंगे, किन्तु तारीख 2 सितम्बर, 1953 और 5 मार्च, 1960 वाले आदेशों के सम्बन्ध में पिटीशनर की शिकायत इस न्यायालय को इस रिट पिटीशन में विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं है । परिणामस्वरूप उपर्युक्त आदेशों में से शेष केवल दो आदेशों पर ही विचार करने की आवश्यकता है ।

3. ऊपर निर्दिष्ट आदेश जिन परिस्थितियों में पारित किए गए थे उनका उल्लेख हम संक्षेप में इसलिए करेंगे जिसमें कि उन परिस्थितियों को जिनमें ये शेष दोनों विशिष्ट आदेश पारित किए गए थे और इन आदेशों के विरुद्ध की गई आपत्ति के आधारों को भी ठीक तरह से समझा जा सके ।

4. 1 सितम्बर, 1928 को पिटीशनर ने पटना प्रैक्टिसिंग स्कूल में सहायक शिक्षक (एसिस्टेंट टीचर) के रूप में सेवा प्रारम्भ की थी और 31 मई, 1934 से वह सबआर्डिनेट एजूकेशनल सर्विस (अधीनस्थ शिक्षा सेवा) के निम्न श्रेणी (लोअर डिवीजन) में विद्यालय

अधीनस्थनिरीक्षक के (सब-इंस्पेक्टर आफ स्कूल्स) रूप में प्रोन्नत किया गया था। आगे चलकर यह पिटीशनर सबआर्डिनेट एजूकेशनल सर्विस के उच्च श्रेणी (अपर डिवीजन) में विद्यालय उपनिरीक्षक डिप्टी (इंस्पेक्टर आफ स्कूल्स) के रूप में प्रोन्नत किया गया और बिहार के छोटा नागपुर डिवीजन के सिंघभूम जिले में सराईकेला में 1 नवम्बर, 1949 से नियुक्त किया गया। सराईकेला राज के बिहार प्रान्त में विलयन के पश्चात् प्रान्तीय सरकार ने, स्थानीय क्षेत्र में शिक्षा का नियन्त्रण सीधे अपने हाथ में ले लिया और शिक्षा विभाग के अपने कर्मचारियों के माध्यम से उसका नियन्त्रण किया। यह पद्धति प्रान्त के उन अन्य भागों से भिन्न थी, जहां शिक्षा का नियन्त्रण और प्रबन्ध जिला और स्थानीय बोर्डों के अधीन था। सराईकेला के विद्यालय उपनिरीक्षक के रूप में पिटीशनर की सेवाओं को ज्येष्ठ आफिसरों ने, जिनके अन्तर्गत शिक्षा निदेशक (डाइरेक्टर आफ पब्लिक इंस्ट्रक्शन) भी था संतोषजनक पाया और इसलिए उसे सामुदायिक परियोजना में शिक्षा अधिकारी (एजूकेशन आफिसर) के ज्येष्ठ पद पर नियुक्त करने की सिफारिश की। 1951 के अन्त के आसपास उसे विद्यालय अपर उपनिरीक्षक (एडिशनल डिप्टी इंस्पेक्टर आफ स्कूल्स) के रूप में मानभूम जिले के पुरुलिया स्थान में अन्तरित कर दिया गया। इसके पश्चात् पिटीशनर को मई, 1953 में या इसके आसपास बेतिया अन्तरित कर दिया गया। बेतिया में पिटीशनर ने शिक्षा निदेशक (डाइरेक्टर आफ पब्लिक इंस्ट्रक्शन) के तारीख 2 सितम्बर, 1953 वाले आदेश की प्रति प्राप्त की थी जिसमें यह निदेश दिया गया था कि श्री कन्हैया लाल, जिला विद्यालय निरीक्षक की रिपोर्ट के आधार पर, पिटीशनर के चरित्र पुस्तिका (केरेक्टर रोल) में परिनिंदा अभिलिखित की गई है। पिटीशनर के कथनानुसार श्री कन्हैया लाल, डिस्ट्रिक्ट इंस्पेक्टर आफ स्कूल्स, पिटीशनर से वैमनस्य रखते थे। पिटीशनर ने तारीख 2 सितम्बर, 1953 वाले आदेश को रद्द कराने के लिए कोशिश की किन्तु वह असफल रहा। यह वही प्रथम आदेश है जिसे अभिखण्डित कराने की प्रार्थना पिटीशनर ने की है।

5. कतिपय अभिकथनों के आधार पर पिटीशनर को 6 फरवरी, 1954 से विलंबित कर दिया गया और बेतिया के विद्यालय उपनिरीक्षक के कर्त्तव्यभार से उसे मुक्त कर दिया। 16 मार्च, 1954 को एक आरोप-पत्र पिटीशनर के नाम जारी किया गया और वह दोषी पाया गया। किन्तु आगे चल कर ये जांच कार्यवाहियां अपास्त कर दी गईं और एक नई जांच का आदेश दिया गया। इसके परिणामस्वरूप निलंबन का आदेश रद्द कर दिया गया। किन्तु उसके तुरन्त बाद ही एक नई जांच की गई जिसमें वह पुनः दोषी पाया गया जैसा कि तारीख 22 सितम्बर, 1959 के जांच अधिकारी की रिपोर्ट से प्रकट होता है। अनुशासक प्राधिकारी ने, जो शिक्षा निदेशक था, 5 मार्च, 1960 को एक आदेश पारित किया जिसमें उसने जांच अधिकारी द्वारा पिटीशनर के विरुद्ध अभिलिखित निष्कर्ष को सही माना और यह अभिनिर्धारित किया कि पिटीशनर के विरुद्ध आरोप साबित हो गए हैं। तदनुसार इस आदेश द्वारा पिटीशनर अपने पद से अधीनस्थ शिक्षा सेवा (सब-आर्डिनेट एजूकेशनल सर्विस) के निम्न श्रेणी के पद पर दण्ड के स्वरूप में प्रतिवर्तित कर दिया गया और यह भी निदेश दिया गया कि उसके पर्सनल कैरेक्टर रोल (व्यक्तिगत चरित्र-पुस्तिका) में परिनिंदा की प्रविष्टि अभिलिखित कर दी जाए। यह दूसरा आदेश है जिसे रिट पिटीशन में चुनौती दी गई है।

6. हमारे लिए यह आवश्यक नहीं है कि हम पहले और दूसरे आदेश के बारे में विस्तार से विचार करें, क्योंकि अब ये दोनों आदेश उच्च न्यायालय के विनिश्चय के अनुसार पिटीशनर के विरुद्ध अभिनिश्चित कर दिए गए हैं।

7. पिटीशनर ने पटना के मुन्सिफ के न्यायालय में 1961 का हक-वाद संख्या 86 फाइल किया था जिसमें उसने तारीख 5 मार्च, 1960 वाले आदेश को चुनौती दी थी, और उन जांच कार्यवाहियों को चुनौती दी थी जिनके आधार पर उक्त आदेश पारित किया गया था। उसने इस वाद में इन आदेशों को अवैध होने की घोषणा करने की मांग की थी। उसने तारीख 2 सितम्बर, 1953 को पारित परिनिंदा के आदेश को और इसमें शामिल किए गए तारीख 5 मार्च, 1960 वाले आदेश को भी चुनौती दी थी। यद्यपि प्रत्यर्थियों ने इस वाद का विरोध किया था, किन्तु अन्ततः इसकी डिक्री 11 अप्रैल, 1963 को कर दी गई। प्रत्यर्थियों ने पटना के अधीनस्थ न्यायाधीश (सब-जज) के न्यायालय में 1963/64 की अपील संख्या 132/24 फाइल की जिसमें उन्होंने मुन्सिफ की डिक्री को चुनौती दी। 24 जून, 1964 को यह अपील मंजूर कर ली गई जिसके परिणामस्वरूप पिटीशनर का 1961 का वाद संख्या 86 खारिज हो गया। पिटीशनर के 1964 की द्वितीय अपील संख्या 646 को उच्च न्यायालय ने 4 मई, 1967 को खारिज कर दिया। इन कार्यवाहियों से यह स्पष्ट है कि तारीख 2 सितम्बर, 1953 वाले परिनिंदा के आदेश को और तारीख 5 मार्च, 1960 वाले प्रतिवर्तन के आदेश को भी उच्च न्यायालय ने सही पाया और अब पिटीशनर उन आदेशों को फिर से चुनौती देने के लिए स्वतंत्र नहीं है। किन्तु जब हम तारीख 3 अगस्त, 1966 और तारीख 12 जून, 1968 वाले आदेशों की वैधता के सम्बन्ध में पिटीशनर की आपत्ति पर विचार करेंगे तब हक वाद से सम्बद्ध कतिपय कार्यवाहियों का उल्लेख करना हमारे लिए आवश्यक हो सकता है। तारीख 5 मार्च, 1960 वाला प्रतिवर्तन का आदेश जब पारित किया गया था, उस समय पिटीशनर देवघर के विद्यालय उपनिरीक्षक के रूप में कार्य कर रहा था। विद्यालय उपनिरीक्षक का कार्यालय होली की छुट्टियों के कारण 11 मार्च, 1960 से बन्द था और पिटीशनर का यह दावा है कि उसने पटना जाने के लिए प्राधिकारियों की अनुमति से अपने मुख्य कार्यालय के स्थान को छोड़ा था। पिटीशनर ने तारीख 5 मार्च 1960 वाले आदेश को पटना में 23 मार्च, 1960 को उस समय प्राप्त किया था जब वह वहां बीमार था। उसने छुट्टी के लिए आवेदन किया था। पिटीशनर का कहना यह है कि उसने 1961 के अपने हक-वाद संख्या 86 में तारीख 5 अक्टूबर, 1961 वाला अस्थायी व्यादेश (टेम्पोरेरी इन्जक्शन) 5 अक्टूबर, 1961 को अभिप्राप्त किया था। इस आदेश में प्रत्यर्थियों को इस बात से निर्बन्धित किया गया था कि वे तारीख 5 मार्च, 1960 वाले आदेश के अनुसार पिटीशनर को अधीनस्थ शिक्षा सेवा (सबार्डिनेट एजूकेशनल सर्विस) की निम्न श्रेणी में प्रतिवर्तित न करें। यद्यपि पिटीशनर ने उस पद पर, जिसके लिए वह मूल रूप से हकदार था, कार्य करना स्वीकार कर लिया था, तथापि प्रत्यर्थियों ने उसे अधीनस्थ शिक्षा सेवा के उच्च श्रेणी (अपर डिवीजन) के पद पर कार्य करने की इजाजत नहीं दी। पिटीशनर को इस पद पर कार्य करने की अनुमति न देने में प्रत्यर्थियों ने पटना के मुन्सिफ द्वारा मंजूर किए गए अस्थायी व्यादेश का घोर उल्लंघन किया था।

8. 5 अगस्त, 1966 को शिक्षा निदेशक ने यह आदेश पारित किया कि चूंकि पिटीशनर 1 मार्च, 1960 से 5 वर्षों से अधिक समय तक अपनी ड्यूटी पर नहीं था इसलिए वह 2 मार्च, 1965 से सरकारी नियोजन में बिहार सर्विस कोड के नियम 76 के अधीन नहीं रहा। पिटीशनर ने इस आदेश को रद्द करने के लिए अभ्यावेदन किया किन्तु उसे कोई सफलता नहीं मिली। यह तीसरा आदेश है जिसे चुनौती दी गई है।

9. पिटीशनर ने 58 वर्ष की आयु पूरी कर लेने पर 18 अप्रैल, 1967 को एक पत्र शिक्षा निदेशक को भेजा जिसमें उसने यह प्रार्थना की कि उसकी (पिटीशनर की) पेंशन संदत्त करने की व्यवस्था की जाए। बार-बार स्मरण-पत्र दिए जाने के बावजूद पिटीशनर को बहुत समय तक कोई उत्तर नहीं मिला। अन्ततः 12 जून, 1968 को शिक्षा निदेशक ने पिटीशनर के तारीख 18 जुलाई, 1967 वाले उस आवेदन पर, जो पेंशन के संदाय के बारे में था, आदेश पारित कर दिया। इस आदेश में यह कहा गया था कि बिहार पेंशन रूल्स (जिसे इसके आगे पेंशन रूल्स के रूप में निर्दिष्ट किया गया है) के नियम 46 के अधीन विभाग (डिपार्टमेन्ट) पिटीशनर को कोई पेंशन मंजूर नहीं कर सकता। हम इस नियम का उल्लेख समुचित प्रक्रम में करेंगे किन्तु यहां इस तथ्य पर ध्यान देना काफी है कि किसी नियम के अधीन कोई भी पेंशन किसी ऐसे सरकारी सेवक को मंजूर नहीं की जा सकती जो अवचार, दिवालियापन या अदक्षता के कारण पदच्युत किया गया हो या हटाया गया हो। पिटीशनर के कथनानुसार यह आदेश अवैध और शून्य है। यह चौथा आदेश है जिसको चुनौती दी गई है।

10. पिटीशनर के कथनानुसार तारीख 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश पिटीशनर को सेवा से हटाए जाने का आदेश है और यह अवैध और शून्य है क्योंकि यह आदेश संविधान के अनुच्छेद 311 का उल्लंघन करके पारित किया गया है। यह भी बात है कि यह आदेश नियमों द्वारा न तो वैध है और न अपेक्षित है क्योंकि पिटीशनर अपनी ड्यूटी से 5 वर्षों से अधिक समय तक के लिए निरन्तर अनुपस्थित नहीं था। पिटीशनर के कथनानुसार इस आदेश में एक और कमी है क्योंकि प्रत्यर्थियों ने उस कालावधि की तारीख से, जब पिटीशनर अपनी ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित रहा है, संगणना करने के बारे में जो दलीलें पेश की हैं उनमें एक ही तरह की बात नहीं कही गई है। यह दलील तारीख 5 अगस्त, 1966 वाले आदेश में दी गई विभिन्न तारीखों पर और प्रत्यर्थियों द्वारा इस निमित्त फाइल किए गए प्रतिशपथपत्र (काउन्टर एफिडेविट) में दी गई तारीखों पर आधारित है। तारीख 12 जून, 1968 वाले आदेश के बारे में दो आपत्तियां की गई हैं अर्थात् (क) यह कि यह आदेश पेंशन रूल्स के नियम 46 के अधीन अपेक्षित नहीं था जिसके अधीन उसे पारित करना तात्पर्यित था और (ख) पिटीशनर को पेंशन पाने का जो अधिकार है वह एक संपत्ति है और प्रत्यर्थियों ने पिटीशनर के लिए इसका उपबन्ध न करके उसके उन मूल अधिकारों का उल्लंघन किया है जो संविधान के अनुच्छेद 19(1)(च) और 31(1) के अधीन गारंटी किए गए हैं।

11. शिक्षा सहायक निदेशक (एसिस्टेंट डाइरेक्टर आफ एजूकेशन) ने प्रत्यर्थियों की ओर से एक प्रतिशपथपत्र फाइल किया है। प्रत्यर्थियों के कथनानुसार तारीख 2 सितम्बर, 1953 को पारित परिनिंदा का आदेश और तारीख 5 मार्च, 1960 वाला प्रतिवर्तन का

आदेश विधिमान्य और वैध हैं और इन आदेशों को पारित करने में किसी भी नियम का अतिक्रमण नहीं किया गया है। पिटीशनर को जांच कार्यवाहियों में भाग लेने के लिए पूर्ण अवसर प्रदान किया गया था और जांच रिपोर्ट पर तथा पिटीशनर द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण पर विचार करने के पश्चात् प्रतिवर्तन का आदेश पारित किया गया था। पिटीशनर को इन आदेशों में से किसी आदेश को चुनौती देने का हक प्राप्त नहीं है क्योंकि 1964 की द्वितीय अपील संख्या 640 में पटना उच्च न्यायालय के तारीख 4 मार्च, 1967 वाले विनिश्चय द्वारा इन आदेशों का निपटारा हो गया था।

12. तारीख 5 अगस्त, 1966 वाले आदेश के बारे में प्रत्यर्थियों ने यह बात स्वीकार कर ली है कि पिटीशनर 10 मार्च, 1960 तक अपनी ड्यूटी पर उपस्थित था। पिटीशनर 11 मार्च, 1960 से कार्यालय में उपस्थित नहीं रहा। यह बात भी स्वीकार कर ली गई है कि आदेश में यह कथन गलती से किया गया है कि पिटीशनर 1 मार्च, 1960 से 5 वर्षों से अधिक समय तक के लिए ड्यूटी पर उपस्थित नहीं था। "1 मार्च, 1960 वाली तारीख को" 11 मार्च, 1960 के रूप में पढ़ा जाना चाहिए। प्रत्यर्थियों ने पिटीशनर के इस प्रकथन का विरोध किया है कि उसने प्राधिकारियों की अनुमति से अपने मुख्यालय (हेडक्वार्टर्स) को 11 मार्च, 1960 से छोड़ दिया था। इसके विपरीत प्रत्यर्थियों के कथनानुसार पिटीशनर ने उपखण्ड शिक्षा अधिकारी (सब डिवीजन एजूकेशनल आफिसर) के कार्यालय में एक आवेदन दिया था जिसमें 11 मार्च, 1960 से छुट्टी की मांग की गई थी, और उसने अपना मुख्यालय छोड़ने के लिए कोई पूर्व अनुमति अभिप्राप्त नहीं की थी। यह भी प्रकथन किया गया है कि पिटीशनर को प्रतिवर्तित करने वाला तारीख 3 मार्च, 1960 का आदेश तुरन्त प्रभावी हो गया था और पिटीशनर को इस बात की भी इत्तिला दे दी गई थी। प्रत्यर्थियों ने विनिर्दिष्ट रूप से निम्नलिखित दलील दी है—

> "दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि पिटीशनर 11-3-1960 से 5-8-1968 तक सेवा में निरन्तर 5 वर्ष से अधिक तक नहीं रहा। 1952 के बिहार सर्विस कोड के नियम 76 के आधार पर पिटीशनर सरकार की सेवा से प्रविरत हो गया था क्योंकि यह 5 वर्षों तक के लिए अपनी ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित रहा और यह बात स्वतः अवचार और सेवा में अदक्षता के तुल्य है। प्रस्तुत मामले में संविधान के अनुच्छेद 311 के उपबन्ध इस मामले के तथ्यों को लागू नहीं होते हैं क्योंकि उसकी सेवाओं का पर्यवसान किसी आरोप के कारण नहीं किया गया था बल्कि कानूनी आधार पर, अर्थात् बिहार सर्विस कोड, 1952 के नियम 76 के आधार पर, उसकी सेवाएं अपने आप पर्यवसित हो गई थीं। अनुच्छेद 311 ऐसे मामले में लागू होता है जिसमें सरकारी सेवक की सेवाएं किसी आरोप के संबंध में पर्यवसित की जाती हैं। किन्तु यह अनुच्छेद ऐसे मामले में लागू नहीं होता है जिसमें सरकारी सेवक किसी कानून के आधार पर सरकारी सेवा में बने रहने से प्रविरत हो जाता है।"

प्रत्यर्थियों के कथनानुसार बिहार सर्विस कोड, 1952 (जिसे इसके आगे सर्विस कोड के रूप में निर्दिष्ट किया गया है) के नियम 76 के आधार पर तारीख 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश पारित किया गया था इसलिए संविधान के अनुच्छेद 311 का कोई उल्लंघन नहीं

हुआ है। इस प्रक्रम में ध्यान देने की बात यह है कि आदेश में और प्रतिशपथपत्र में वर्णित 5 वर्षों से अधिक समय तक के लिए सेवा से निरन्तर अनुपस्थित रहने की तारीखों में कुछ अन्तर है। हम इसका उल्लेख तारीख 5 अगस्त, 1966 के आदेश के बारे में पिटीशनर की आपत्ति पर विचार करते समय करेंगे। प्रत्यर्थियों ने यह बात भी स्वीकार की है कि मुन्सिफ द्वारा व्यादेश पारित किए जाने के बाद भी विभाग हमेशा पिटीशनर पर यह जोर डाल रहा था कि वह निम्न श्रेणी के उस पद का कार्यभार संभाल ले जिस पद पर वह प्रतिवर्तित किया गया था और पिटीशनर ने कभी भी उस पद का कार्यभार नहीं सम्भाला।

13. प्रत्यर्थियों ने तारीख 12 जून, 1968 वाले उस आदेश के बारे में, जिसमें कि और जिसके द्वारा पिटीशनर को यह इत्तिला दी गई थी कि विभाग उसे पेंशन मंजूर करने के लिए पेंशन नियमों के नियम 46 के अधीन असमर्थ था, यह कथन किया है कि यह आदेश विधिमान्य है और उक्त नियम की परिधि के अन्तर्गत आता है। प्रत्यर्थियों के कथनानुसार तारीख 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश पिटीशनर की सेवा से इस कारण हटाने का आदेश है क्योंकि पिटीशनर 5 वर्ष से अधिक समय तक अपनी ड्यूटी पर उपस्थित नहीं था और यह कार्य स्वतः अवचार है। इसलिए पिटीशनर किसी पेंशन का दावा करने के लिए हकदार नहीं था। इस आशय का भी प्रकथन किया गया है कि आक्षेपित आदेशों द्वारा पिटीशनर के किसी मूल अधिकार के उल्लंघन का प्रश्न नहीं उठता और इसलिए रिट पिटीशन मंजूर नहीं किया जा सकता।

14. पिटीशनर ने एक प्रत्युत्तर फाइल किया है जिसमें उसने यह बताया है कि तारीख 5 अगस्त, 1966 वाले आदेश में और प्रत्यर्थियों की ओर से शिक्षा सहायक निदेशक द्वारा फाइल किए गए प्रतिशपथपत्र में दी गई तारीखों में अंतर है। पिटीशनर का कहना है कि इस कालावधि की संगणना या तो आदेश में दी गई तारीखों के अनुसार या प्रतिशपथपत्र में दी गई तारीखों के अनुसार, चाहे जिस रीति से भी की जाए, नियम 76 लागू नहीं होता है क्योंकि वह 5 वर्षों से अधिक समय तक के लिए अपनी ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित नहीं था। पिटीशनर ने आगे यह भी प्रकथन किया है कि वह प्राधिकारियों से अनुमति लेने के बाद ड्यूटी से अनुपस्थित रहा। पिटीशनर का कहना यह है कि उसके हक बाद में पटना के मुंसिफ ने जो विभिन्न आदेश पारित किए थे, उनके अनुसार यदि समुचित रूप से कालावधि की संगणना की जाए तो वह अपनी ड्यूटी से 5 वर्षों से अधिक समय तक के लिए निरन्तर अनुपस्थित नहीं था। पिटीशनर का कहना यह है कि जब न्यायालय ने प्रत्यर्थियों को प्रतिवर्तन का आदेश प्रभावी करने से अवरुद्ध कर दिया है, और जब पिटीशनर ने उस पद का, जिस पर वह प्रतिवर्तित कर दिया गया था, कार्य संभालने की पेशकश की थी तब प्रत्यर्थियों ने न्यायालय के आदेश पर कोई ध्यान दिए बिना उसे कार्यभार संभालने की अनुमति नहीं दी थी बल्कि इसके विपरीत प्रत्यर्थियों ने उस पर इस बात के लिए जोर डाला था कि वह उस निम्न श्रेणी के उस पद का कार्यभार संभाले जिस पर कि वह प्रतिवर्तित कर दिया गया था। पिटीशनर का कहना यह है कि यह बात अवैध है। पिटीशनर ने आगे

अपने इस अभिकथन पर जोर दिया है कि वह पेंशन पाने का हकदार है और ऐसे पेंशन का संदाय रोके रखने से उसके मूल अधिकारों का उल्लंघन होता है। पिटीशनर का यह भी कहना है कि प्रत्यर्थियों ने उसके पेंशन पाने के अधिकार का प्रत्याख्यान नहीं किया हैं बल्कि इसके विपरीत प्रत्यर्थियों ने यह दलील दी है कि चूंकि पिटीशनर तारीख 5 अगस्त, 1966 वाले आदेश द्वारा सेवा से हटा दिया गया था इसलिए वह पेंशन रूल्स के नियम 46 के आधार पर पेंशन पाने का हकदार नहीं है। पिटीशनर ने यह बात भी बतलाई है कि चूंकि तारीख 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश अवैध है इसलिए तारीख 12 जून, 1968 वाला आदेश, जो कि पूर्वतर आदेश पर आधारित है, भी अकृत और शून्य है।

15. विचारणीय प्रश्न यह है कि तारीख 5 अगस्त, 1966 और 12 जून, 1968 वाले आदेश वैध और विधिमान्य हैं या नहीं। इस पहलू पर विचार करने से पूर्व यह बता देना आवश्यक है कि इस पिटीशन को अनुच्छेद 32 के अधीन कायम रखने के लिए पिटीशनर को यह सिद्ध करना पड़ेगा कि या तो 5 अगस्त, 1966 या 12 जून, 1968 वाले आदेशों में से किसी आदेश का या इन दोनों आदेशों का प्रभाव उसके उन मूल अधिकारों पर पड़ता है जो उसे गारण्टी किए गए हैं। पिटीशनर के कथनानुसार 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश वह आदेश है जिसके द्वारा उसे सेवा से हटाया गया था और वह अनुच्छेद 311 का अतिक्रमण करके पारित किया गया था। प्रत्यर्थियों ने भी अपनी ओर से सहायक शिक्षा निदेशक द्वारा फाइल किए गए प्रतिशपथपत्र के पैरा 11 में यह बात स्वीकार की है कि यह वही आदेश है जिसके द्वारा पिटीशनर सेवा से हटाया गया था। यदि यह मान भी लिया जाए कि उक्त आदेश अनुच्छेद 311 के अतिक्रमण में पारित किया गया था, तो भी उक्त परिस्थितियों से पिटीशनर को यह अधिकार प्राप्त नहीं होता कि वह इस न्यायालय से अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन करे। पिटीशनर का पक्षकथन यह है कि पेंशन प्राप्त करने के लिए उसका अधिकार "संपत्ति" है और प्रत्यर्थियों द्वारा केवल इन्कार करने या रद्द करने से इस अधिकार का "संपत्ति" का जो स्वरूप है वह समाप्त नहीं हो जाता। तारीख 12 जून, 1968 वाला आदेश पेंशन के संदाय को रोक रखने का आदेश है या इतना तो है ही कि यह आदेश प्रत्यर्थियों द्वारा पिटीशनर को पेंशन प्राप्त करने से इन्कार करने के बराबर है। दोनों ही सूरत में पिटीशनर के संपत्ति सम्बन्धी अधिकारों पर संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (च) और 31 (2) के अधीन प्रभाव पड़ता है। उसके पेंशन का अधिकार किसी कार्यपालिक आदेश द्वारा छीना नहीं जा सकता। प्रत्यर्थियों ने प्रतिशपथपत्र में पिटीशनर के पेंशन पाने के अधिकारों के सम्बन्ध में कोई विवाद नहीं उठाया है। किन्तु प्रत्यर्थियों का पक्षकथन यह है कि तारीख 12 जून, 1968 वाला आदेश पेंशन रूल्स के नियम 46 द्वारा न्यायसंगत हैं। हम इस पहलू पर आगे विचार करेंगे। प्रतिशपथपत्र में यह कोरा प्रकथन मात्र किया गया है कि किसी मूल अधिकार का प्रश्न नहीं उठता है और इसलिए यह पिटीशन चलने योग्य नहीं है। प्रतिशपथपत्र में यह बात अधिक स्पष्ट नहीं की गई है कि किस आधार पर यह दलील पेश की गई थी किन्तु हमारे समक्ष प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउन्सेल श्री वी० पी० झा ने यह दलील पेश की है कि राज्य द्वारा पेंशन का संदाय रोक रखे जाने के कारण पिटीशनर के किसी मूल अधिकार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

16. हम श्री झा की इस दलील को स्वीकार नहीं करते कि तारीख 12 जून, 1968 वाले आदेश पारित किए जाने के कारण पिटीशनर के किसी मूल अधिकार पर प्रभाव नहीं पड़ा है। इस विषय से सम्बद्ध सुसंगत पेंशन रूल्स का और कतिपय विनिश्चयों का भी उल्लेख हम करेंगे। हमारी राय में पेंशन पाने का अधिकार "संपत्ति" है और इसे रोक रखे जाने के कारण पिटीशनर के उन मूल अधिकारों पर प्रभाव पड़ता है जिनकी गारण्टी उसे अनुच्छेद 19 (1) (च) और 31 (1) के अधीन दी गई है। चूंकि इस निर्णय के आगे आने वाले अंश में इस विषय पर विस्तार से विचार-विमर्श किया गया है इसलिए यहां इस प्रक्रम में केवल इतना ही कह देना पर्याप्त है कि यह पिटीशन चलने योग्य है। प्रत्यर्थियों के कथनानुसार भी तारीख 12 जून, 1968 वाले आदेश का कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है और यह आदेश तारीख 5 अगस्त, 1966 वाले पूर्वतर आदेश के आधार पर पारित किया गया था। हमारी राय में यदि तारीख 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश कायम नहीं रखा जा सकता तो उसका परिणाम यह होगा कि तारीख 12 जून, 1968 वाला आदेश भी कायम नहीं रखा जा सकता। इसलिए हम पहले तारीख 5 अगस्त, 1966 वाले आदेश की विधिमान्यता पर विचार करेंगे। शिक्षा निदेशक बिहार, द्वारा पारित तारीख 5 अगस्त, 1966 वाले आदेश का पूरा पाठ निम्नलिखित रूप में है—

"संख्या—7/-07/60 शिक्षा 3791 :

श्री देवकीनन्दन प्रसाद, सब इन्स्पैक्टर आफ स्कूल्स, देवघर, 1-3-1950 से 5 वर्षों से अधिक समय तक अपनी ड्यूटी पर न रहने के कारण बिहार सर्विस कोड के नियम 76 के अधीन 2-3-65 से सरकारी नियोजन में नहीं रहे।

हस्ता० के० अहमद
डाइरेक्टर आफ पब्लिक इन्स्ट्रक्शन,
बिहार.

ज्ञापन संख्या 3791 पटना, तारीख 5 अगस्त, 1966।

इसकी प्रतिलिपि श्री देवकीनन्दन, न्यू यारपुर, पटना, को सूचनार्थ भेजी गई।"

17. सर्विस कोड (सेवा संहिता) का नियम 76 निम्नलिखित रूप में है—

"यदि कोई सरकारी सेवक भारत में पर-सेवा (फारेन सर्विस) में अन्यत्र रहने की बजाय अपनी ड्यूटी से इजाज़त लेकर या इजाज़त के बिना निरन्तर 5 वर्ष तक अनुपस्थित रहता है, तो वह सरकारी नियोजन में तब तक नहीं रहेगा जब तक कि राज्य सरकार मामले की विशेष परिस्थितियों को दृष्टि में रखकर अन्यथा अवधारित न कर दे।"

18. उक्त नियम के अधीन कार्यवाही करने के लिए अनिवार्य अपेक्षा यह है कि सरकारी सेवक अपनी ड्यूटी से 5 वर्ष से अधिक समय तक निरन्तर अनुपस्थित रहा हो। इस नियम के अधीन सरकारी सेवक का इजाज़त लेकर या इजाज़त के बिना ड्यूटी से अनुपस्थित रहना तब तक तत्वहीन है जब तक कि यह सिद्ध नहीं कर दिया जाता कि वह 5 वर्षों से अधिक कालावधि के लिए अपनी ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित था। हम इस पहलू का उल्लेख इसलिए कर दे रहे हैं क्योंकि पिटीशनर का कहना यह है कि उसने 11 मार्च, 1960 से

छुट्टी ली थी और अपने ज्येष्ठ अधिकारियों से आवश्यक मंजूरी ले लेने के पश्चात् उसने अपना मुख्यालय छोड़ा था। इसके विपरीत प्रत्यर्थियों का कहना यह है कि पिटीशनर ने 11 मार्च, 1960 से छुट्टी के लिए केवल आवेदन किया था और उसने वरिष्ठ अधिकारियों की पूर्व अनुमति प्राप्त किए बिना अपना मुख्यालय छोड़ दिया था। हमारे लिए इस संविवाद पर विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि नियमों के अधीन इजाजत लेकर या इजाजत के बिना दोनों रूपों में ड्यूटी से अनुपस्थित रहने की कालावधि को एक ही तरह का माना गया है।

19. आदेश में दी गई तारीखों के मुताबिक पिटीशनर 1 मार्च, 1960 से 5 वर्षों से अधिक समय तक अपनी ड्यूटी पर नहीं था और वह 2 मार्च, 1965 से सरकार नियोजन में नहीं रहा। पिटीशनर का कहना यह है कि यह आदेश अवैध है क्योंकि वह 10 मार्च, 1960 तक ड्यूटी पर था और ऐसी हालत में 5 वर्ष की निरन्तर अनुपस्थिति 2 मार्च, 1965 को पूरी नहीं हो सकती। किन्तु इस आदेश के विरुद्ध इससे भी अधिक गम्भीर आक्षेप यह है कि पिटीशनर के अपनी ड्यूटी से 5 वर्षों से अधिक समय तक के लिए निरन्तर अनुपस्थित रहने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है। इसके विपरीत पिटीशनर का कहना यह है कि वह अपनी ड्यूटी करने के लिए हमेशा तैयार था और प्रत्यर्थियों ने सिविल न्यायालयों के आदेशों की उपेक्षा करते हुए पिटीशनर को कर्त्तव्य संभालने से अवैध रूप में रोक रखा था। पिटीशनर के विद्वान् काउन्सेल श्री बिशन नारायण ने इस सम्बन्ध में पिटीशनर द्वारा फाइल किए गए 1961 का हक-वाद संख्या 198 के ब्यौरों का और उस न्यायालय द्वारा पारित कतिपय आदेशों का भी उल्लेख किया है। श्री नारायण ने हमारा ध्यान पिटीशनर द्वारा प्राधिकारियों को लिखे गए उन पत्रों की ओर भी आकृष्ट किया है, जिनमें पिटीशनर ने काम करने की पेशकश की थी और प्रत्यर्थियों ने कोई उत्तर नहीं भेजा था और अन्ततः पिटीशनर को प्रतिवर्तित पद का कर्त्तव्य भार संभालने के लिए कहा था, भले ही इस प्रतिवर्तन के आदेश को पटना के मुंसिफ ने अवैध घोषित कर दिया था। हमने प्रत्यर्थियों की ओर से फाइल किए गए प्रतिशपथपत्र में किए गए प्रकथनों का उल्लेख पहले ही कर दिया है। जहां तक इस पहलू का सम्बन्ध है, प्रतिशपथपत्र के पैरा 8 में केवल यह बात स्वीकार की गई है कि पिटीशनर 10 मार्च, 1960 तक ड्यूटी पर था और उसने 11 मार्च, 1960 से ही अपनी ड्यूटी पर उपस्थित रहना बन्द कर दिया था, इसलिए प्रत्यर्थियों ने पिटीशनर के इस प्रकथन को कि वह 10 मार्च, 1960 तक ड्यूटी पर था सही मान लिया। इससे यह परिणाम निकलता है कि प्रत्यर्थियों के कहने के मुताबिक भी पिटीशनर केवल 11 मार्च, 1960 से 5 वर्षों से अधिक समय तक ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित था और वह 2 मार्च, 1965 से सरकारी नियोजन में नहीं रहा। किसी और बात के बिना भी यह आसानी से कहा जा सकता है कि यह संगणना पूर्णतया गलत है क्योंकि ऊपर वर्णित तारीखों के अनुसार पिटीशनर को 5 वर्ष से अधिक समय तक ड्यूटी पर अनुपस्थित नहीं माना जा सकता।

20. प्रत्यर्थियों ने प्रतिशपथपत्र में जो बात कही है उसमें और उनके द्वारा पहले की गई बात में कुछ अन्तर है। वे यह बात तो स्वीकार करते हैं कि अनुपस्थिति की कालावधि की संगणना जिस तारीख से की जानी चाहिए वह 1 मार्च, 1960 नहीं बल्कि 11 मार्च, 1960 है किन्तु उन्होंने यह भी कथन किया है कि पिटीशनर 11 मार्च,

1960 से लेकर 5 अगस्त, 1966 तक अर्थात् उस तारीख तक जब यह आदेश पारित किया गया था, अपनी ड्यूटी से अनुपस्थित रहा और इसलिए वह 5 वर्षों से अधिक समय तक सेवा में निरन्तर नहीं रहा था। इसके माने यह हुए कि तारीख 5 अगस्त, 1966 के आदेश में सेवा से बाहर रहने की जो कालावधि दी गई है, अर्थात् 2 मार्च, 1965, उसे प्रत्यर्थियों ने तारीख 5 अगस्त, 1966 वाले आदेश के पारित किए जाने की तारीख में बदल दिया है।

21. अब हम इस आधार पर विचार करेंगे कि तारीख 5 अगस्त, 1966 वाले आदेश को इस रूप में पढ़ा जाना चाहिए कि पिटीशनर 11 मार्च, 1960 से लेकर 5 अगस्त, 1966 तक निरन्तर 5 वर्ष से अधिक समय तक अपनी ड्यूटी पर नहीं था। यदि प्रत्यर्थी इस परिस्थिति को सिद्ध कर देने में समर्थ है तो यह कहना अनावश्यक है कि सर्विस कोड का नियम 75 इस तथ्य के बावजूद प्रवृत्त हो जाएगा कि पिटीशनर चाहे इजाजत लेकर या इजाजत के बिना अनुपस्थित था। पिटीशनर के कहने के मुताबिक वह उपर्युक्त कालावधि के दौरान भी 5 वर्षों से अधिक समय तक निरन्तर अनुपस्थित नहीं था जैसा कि प्रत्यर्थियों ने कथन किया है।

22. अब पिटीशनर द्वारा संस्थित 1966 का हक-वाद संख्या 86 से सम्बन्धित कतिपय कार्यवाहियों का उल्लेख कर देना आवश्यक है जिसे प्रत्यर्थी ने पटना के मुंसिफ III के न्यायालय में संस्थित किया था। उस वाद में पिटीशनर ने तारीख 5 मार्च, 1960 वाले आदेश को चुनौती दी थी। इस आदेश में और इसके द्वारा पिटीशनर अधीनस्थ शिक्षा सेवा (सबआर्डिनेट एजूकेशनल सर्विस) की निम्न श्रेणी में प्रतिवर्तित कर दिया गया था और उसकी चरित्र-पुस्तिका (करेक्टर रोल) में उसके विरुद्ध परिनिंदा अभिलिखित करने का निदेश दिया गया था। पिटीशनर के कथनानुसार इस वाद में परिनिंदा के उस आदेश को भी चुनौती दी गई थी जो 2 सितम्बर, 1963 को पारित किया गया था। 5 अगस्त, 1961 को मुंसिफ ने वर्तमान प्रत्यर्थियों को इस बात से अवरुद्ध करने का आदेश पारित किया गया था कि वे शिक्षा निदेशक द्वारा 5 मार्च, 1960 को पारित पिटीशनर के विरुद्ध दण्ड के आदेश को वाद के निपटारे तक लागू न करें। प्रत्यर्थियों ने अब यह बात स्वीकार कर ली है कि पिटीशनर 10 मार्च, 1960 तक ड्यूटी पर था और यह कि वह केवल 11 मार्च, 1960 से अनुपस्थित था। तारीख 5 मार्च, 1960 वाले आदेश को लागू करने से प्रत्यर्थियों को अवरुद्ध करने का जो अस्थायी व्यादेश न्यायालय ने पारित किया था उसे प्रतिशपथपत्र में चुनौती नहीं दी गई थी। पिटीशनर का कहना यह है कि वह 13 अक्टूबर, 1961 को अपने उस कर्त्तव्य भार को संभालने गया था जिससे वह अवैध रूप में प्रतिवर्तित कर दिया गया था, किन्तु पटना के मुन्सिफ के आदेश के बावजूद प्रत्यर्थियों ने उसे अपना कर्त्तव्य भार संभालने की अनुमति नहीं दी। पिटीशनर ने शिक्षा निदेशक को जो पत्र 13 अक्टूबर, 1961, 24 अक्टूबर, 1961, और 1 नवम्बर, 1961 को लिखे थे, उनसे यह बात स्पष्ट है कि पिटीशनर अपना कर्त्तव्य भार संभालने और काम करने के लिए तैयार था। प्रत्यर्थियों की ओर से कोई जवाब नहीं दिया गया था। यह बात निःसंदेह सच है कि पटना के मुन्सिफ ने जो अस्थायी व्यादेश मंजूर किया था उसे अधीनस्थ न्यायाधीश ने 3 अप्रैल, 1962 को निरसित कर दिया था। पिटीशनर ने 11 अप्रैल, 1963 को 1961 वाला जो हक-वाद संख्या 86

संस्थित किया था उसकी डिक्री कर दी गई और प्रत्यर्थियों को तारीख 5 मार्च, 1960 वाले उस आदेश को लागू करने से प्रतिषिद्ध कर दिया गया जिसके द्वारा पिटीशनर को अधीनस्थ शिक्षा सेवा के ज्येष्ठ ग्रेड से निम्न ग्रेड में प्रतिवर्तित किया गया था। पिटीशनर ने शिक्षा निदेशक को फिर एक पत्र 18 अप्रैल, 1963 को लिखा था जिसमें उसने निदेशक का ध्यान 1961 के हक-वाद संख्या 86 में पारित डिक्री की ओर दिलाया था और उससे यह प्रार्थना की थी कि पिटीशनर को विद्यालय उप निरीक्षक (डिप्टी इंसपक्टर आफ स्कूल्स) के रूप में कर्त्तव्य भार संभालने की अनुमति दी जाए। शिक्षा निदेशक ने 20 नवम्बर, 1963 को इस आशय का उत्तर भेजा था कि पिटीशनर की इस दलील पर निदेशालय (डाइरेक्टोरेट) और सरकार के सभी स्तरों पर विचार किया जा चुका है। पिटीशनर को यह निदेश दिया गया था कि वह भागलपुर डिवीजन के रीजनल डिप्टी डाइरेक्टर आफ एजूकेशन को रिपोर्ट करे और "अधीनस्थ शिक्षा सेवा (सबआर्डिनेट एजूकेशनल सर्विस) की निम्न श्रेणी में कर्त्तव्य भार संभाले।" इस पत्र में आगे यह कहा गया है कि "आदेश के उल्लंघन होने की दशा में अधीनस्थता स्वीकार न करने का आरोप इस पर लगाया जाएगा।" हम यह कहने पर विवश है कि इस पत्र में राज्य सरकार की ओर से जो रुख अपनाया गया है वह तनिक भी प्रशंसनीय नहीं है। यह बात स्वीकार कर ली गई है कि 1961 के हक-वाद संख्या 86 में मुन्सिफ ने 11 अप्रैल, 1963 को डिक्री पारित की थी जिसमें उसने प्रत्यर्थियों को तारीख 5 मार्च, 1960 वाले उस आदेश को लागू करने से अवरुद्ध किया था जिसके द्वारा पिटीशनर विद्यालय उप निरीक्षक के पद से अधीनस्थ शिक्षा सेवा के निम्न श्रेणी में प्रतिवर्तित किया गया था। यह बात स्वीकार कर ली गई है कि प्रत्यर्थी उक्त डिक्री के पक्षकार थे और उन्होंने अपीली न्यायालय से बाद में पारित डिक्री को लागू करने से रोकने के लिए कोई आदेश प्राप्त नहीं किया था। मुन्सिफ द्वारा पारित डिक्री का प्रभाव यह था कि पिटीशनर अपने उस मूल पद पर काम करने का हकदार था जिसे यह अपने प्रतिवर्तन से पहले धारण कर रहा था। शिक्षा निदेशक ने 27 नवम्बर, 1963 को जो उत्तर भेजा उससे स्पष्ट है कि प्रत्यर्थियों ने इन पहलुओं पर ध्यान नहीं दिया गया था। पिटीशनर ने शिक्षा निदेशक के तारीख 27 नवम्बर, 1963 वाले पत्र के उत्तर में एक और पत्र तारीख 6 दिसम्बर, 1963 को भेजा था। इस पत्र में पिटीशनर ने पटना के मुन्सिफ के तारीख 11 अप्रैल, 1963 वाली डिक्री का फिर से हवाला दिया था और यह बात बतलाई थी कि वह उस मूल पद के धारण करने का हकदार था जिस पर वह प्रवर्तन के आदेश के पूर्व काम कर रहा था। उसने आगे यह भी बात बतलाई थी कि शिक्षा निदेशक द्वारा भेजे गए तारीख 27 नवम्बर, 1963 वाले पत्र में जो निर्देश अन्तर्विष्ट थे, वे मुन्सिफ की डिक्री के अनुकूल नहीं थे। उसने आगे यह प्रार्थना की थी कि उसे ज्येष्ठ ग्रेड में मूल पद पर कर्तव्य भार संभालने की अनुज्ञा दी जानी चाहिए और अपने सम्बलम् (सेलरी) के बकाया के लिए भी प्रार्थना की थी। प्रत्यर्थियों ने इसका कोई जवाब नहीं दिया और पिटीशनर को उसकी इच्छा के अनुसार कर्त्तव्य भार संभालने की अनुज्ञा नहीं दी गई। प्रत्यर्थियों ने उपर्युक्त पत्र-व्यवहार का बिल्कुल ही खंडन नहीं किया है। प्रत्यर्थियों ने अपने प्रतिशपथपत्र में वास्तव में यह बात स्वीकार की है कि व्यादेश के पारित किए जाने के बाद ही विभाग ने पिटीशनर को सब इंस्पैक्टर आफ स्कूलज के रूप में अर्थात् निम्न ग्रेड में, कर्त्तव्य भार संभालने के लिए

हमेशा जोर डाला था, और पिटीशनर ने उस पद का कर्त्तव्य कभी नहीं संभाला था। इस पहलू के बारे में वृतान्त को पूरा करने के लिए यह बता दिया जा रहा है कि मुन्सिफ ने पिटीशनर के पक्ष में प्रत्यर्थियों को तारीख 5 मार्च, 1960 वाले आदेश को लागू करने से अवरुद्ध करने की जो डिक्री पारित की थी उसे अपील में अधीनस्थ न्यायाधीश ने 1963/64 के हक अपील संख्या 132/34 में 24 जून, 1964 को अपास्त कर दिया था। पिटीशनर की 1964 की द्वितीय अपील संख्या 640 को उच्च न्यायालय ने 11 फरवरी, 1965 को खारिज कर दिया था।

23. ऊपर वर्णित तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाएगा कि 5 अक्टूबर, 1961 से अर्थात मुन्सिफ ने अस्थायी व्यादेश जिस तारीख को मंजूर किया था उस तारीख से लेकर 3 अप्रैल, 1962 तक, अर्थात् उस तारीख तक जिस तारीख को अधीनस्थ न्यायाधीश ने अस्थायी व्यादेश के निरसित किए जाने का आदेश पारित किया था, विभाग ने पिटीशनर को उस ज्येष्ठ पद का कर्त्तव्य भार सम्भालने की अनुज्ञा नहीं दी थी जिसे सम्भालने के लिए वह व्यादेश के बल पर हकदार था। हमने पहले ही इस तथ्य का उल्लेख कर दिया है कि पिटीशनर ने तारीख 5 अक्टूबर, 1961, 13 अक्टूबर, 1961, 20 अक्टूबर, 1961 तथा 1 नवम्बर, 1961 को पत्र भेजे थे जिनमें उसने ज्येष्ठ पद पर काम करने की अपनी तत्परता और इच्छा व्यक्त की थी। प्रत्यर्थियों ने उसे कर्त्तव्य भार सम्भालने की अनुमति नहीं दी इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि पिटीशनर इस कालावधि के दौरान अपनी ड्यूटी पर नहीं था। इसके साथ यह भी बात है कि 11 अप्रैल, 1963 को मुन्सिफ ने वाद में पिटीशनर के पक्ष में डिक्री प्रदान की थी। प्रत्यर्थियों ने अपील न्यायालय से कोई स्थगन आदेश प्राप्त नहीं किया था। इसलिए विचारण न्यायालय की डिक्री तब तक पूर्ण रूप से प्रवृत्त रही, जब तक कि वह 24 जून, 1964 को अपील में अपास्त कर दी गई थी। 11 अप्रैल, 1963 से 24 जून, 1964 तक की कालावधि के दौरान पिटीशनर ने अनेक पत्र लिखे और हमने उन पत्रों का पहले उल्लेख कर दिया है। इन पत्रों में पिटीशनर ने प्रत्यर्थियों से यह प्रार्थना की थी कि उसे ज्येष्ठ ग्रेड में कर्त्तव्य भार सम्भालने की अनुमति प्रदान की जाए। प्रत्यर्थियों ने उसे ज्येष्ठ ग्रेड में कर्त्तव्य भार सम्भालने की अनुमति नहीं प्रदान की बल्कि इसके विपरीत पिटीशनर पर अनुशासनिक कार्यवाही किए जाने की धमकी देकर इस बात के लिए जोर डाला कि वह निम्नतर ग्रेड में पद भार सम्भाल ले। हमने पहले ही यह बता दी है कि प्रत्यर्थियों का यह रवैया मुन्सिफ के आदेश का घोर उल्लंघन करने के रूप में था। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि 11 अप्रैल, 1963 से लेकर 24 जून, 1964 तक की कालावधि के दौरान पिटीशनर ड्यूटी से अनुपस्थित था। इससे यह बात देखी जा सकती है कि प्रत्यर्थियों ने प्रतिशपथपत्र में जो यह दावा किया कि पिटीशनर 11 मार्च, 1960 से लेकर अगस्त, 1966 तक सेवा में निरन्तर 5 वर्षों से अधिक समम तक नहीं रहा, गलत है। ऊपर निर्दिष्ट कालावधि के दौरान 5 वर्षों से अधिक समय तक के लिए पिटीशनर का निरन्तर सेवा में न रहने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है। बल्कि इसकी बजाए यह कहा जा सकता था कि पिटीशनर 11 मार्च, 1960 से, अर्थात् उस तारीख से जिस तारीख से छुट्टी पर जाने के लिए उसने दावा किया है, से लेकर 5 अक्टूबर तक, अर्थात् उस तारीख तक की कालावधि के दौरान जिस तारीख को मुन्सिफ ने अस्थायी व्यादेश पारित किया था, ड्यूटी से अनुपस्थित रहा। हमने पहले ही बता दिया है

कि पिटीशनर के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि वह 5 अक्टूबर, 1961 से लेकर 3 अप्रैल, 1962 तक ड्यूटी से अनुपस्थित रहा। इसलिए अनुपस्थित रहने की निरन्तरता में इस कालावधि के दौरान विघ्न पड़ गया है। पिटीशनर के बारे में यह भी समझा जा सकता है कि वह 3 अप्रैल, 1962 से अर्थात् उस तारीख से जब कि अधीनस्थ न्यायाधीश ने अस्थायी व्यादेश के निरसित किए जाने का आदेश पारित किया था, लेकर 11 अप्रैल, 1963 तक अर्थात् उस तारीख तक जिस तारीख को मुन्सिफ ने पिटीशनर के पक्ष में डिक्री प्रदान की थी, ड्यूटी से अनुपस्थित रहा। इस कालावधि के दौरान पिटीशनर अनुपस्थित था किन्तु आगे चलकर इस अनुपस्थिति की निरन्तरता में 11 अप्रैल, से अर्थात् मुन्सिफ की डिक्री की तारीख से लेकर 24 जून, 1964 तक अर्थात् उस तारीख तक, जिस तारीख को अधीनस्थ न्यायाधीश ने विचारण न्यायालय की डिक्री को उलट दिया था, की कालावधि के दौरान इस अनुपस्थिति में पुनः विघ्न पड़ गया था। हमने पहले ही उन अनेक पत्रों का हवाला दे दिया है जिन्हें इस कालावधि के दौरान पिटीशनर ने भेजा था और जिनका उत्तर शिक्षा निदेशक ने 27 नवम्बर, 1963 को भेजा था। पिटीशनर के बारे में यह नहीं समझा जा सकता कि वह इस कालावधि के दौरान ड्यूटी से अनुपस्थित था। वह तीसरी कालावधि जिसके दौरान पिटीशनर ड्यूटी से अनुपस्थित समझा जा सकता है, 24 जून, 1964 से अर्थात् अधीनस्थ न्यायाधीश की डिक्री की तारीख से लेकर 5 अगस्त, 1966 तक अर्थात् उस तारीख तक जिस तारीख को सर्विस कोड के नियम 76 के अधीन आदेश पारित किया जाना तात्पर्यित था, है। उपर्युक्त परिस्थितियों से यह स्पष्ट रूप से दर्शित है कि पिटीशनर के बारे में यह नहीं समझा जा सकता कि वह 11 मार्च, 1960 से लेकर 5 अगस्त, 1966 तक की कालावधि के दौरान 5 वर्षों से अधिक समय तक ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित रहा। यदि ऐसी बात है तो सर्विस कोड के नियम 76 के लागू किए जाने की मुख्य शर्त पूरी नहीं होती और इसलिए यह निष्कर्ष निकलता है कि तारीख 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश सर्विस कोड के नियम 76 द्वारा समर्थित नहीं है इसलिए वह आदेश अवैध है और उसे अभिखंडित करना होगा।

24. पिटीशनर की यह दलील कि तारीख 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश उसे सेवा से हटाने का आदेश है और यह संविधान के अनुच्छेद 311 का अतिक्रमण करके पारित किया गया है। प्रत्यर्थियों का कहना है कि अनुच्छेद 311 का कोई अतिक्रमण नहीं किया गया है बल्कि इसकी बजाए पिटीशनर का नियोजन सर्विस कोड के नियम 76 के अधीन स्वतः समाप्त हो जाता है। इस पहलू पर आगे अन्वेषण करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि तथ्यों के आधार पर हम यह पाते हैं कि सर्विस कोड का नियम यहां लागू नहीं होता है। यदि इस मामले में 5 वर्षों से अधिक कालावधि तक ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित रहने के कारण सेवा से स्वतः समाप्ति का प्रश्न उठता है तो भी अनुच्छेद 311 ऐसे मामलों में लागू होता है। जैसा कि इस न्यायालय ने **जयशंकर** बनाम **राजस्थान राज्य**[1] में अधिकथन किया है। इस विनिश्चय में इस न्यायालय को जोधपुर सर्विस

---

[1] (1966) 1 एस० सी० आर० 825.

1971(5) eILR(PAT) SC 1

रेगूलेशन के विनियम संख्या 13 पर विचार करना पड़ा था जो निम्नलिखित रूप में है—

> "13. जो कोई व्यक्ति अनुमति के बिना अपने को अनुपस्थित करता है या अनुमति के बिना छुट्टी की समाप्ति के बाद एक मास के लिए या उससे अधिक कालावधि के लिए अनुपस्थित रहा है उसके बारे में यह समझा जाएगा कि उसने अपनी नियुक्ति का परित्याग कर दिया है और वह सक्षम प्राधिकारी की मंजूरी से ही सेवा में बहाल किया जा सकता है।"

25. राजस्थान राज्य की ओर से यह दलील दी गई थी कि उक्त विनियम स्वत: लागू होता था और सेवा से हटाए जाने का कोई प्रश्न नहीं उठा था क्योंकि आफिसर विनियम में वर्णित कालावधि के पश्चात् सेवा में नहीं रह गया था। इस न्यायालय ने उक्त दलील को नामंजूर कर दिया और यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसे व्यक्ति को जिसके विरुद्ध ऐसा आदेश पारित किया जाना प्रस्थापित था, अवसर अवश्य प्रदान किया जाना चाहिए भले ही नियम में इस बात को किसी भी रूप में वर्णित किया गया हो। आगे यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि "कोई अवसर प्रदान न किया जाना अनुच्छेद 311 के विरुद्ध कार्य करना है और यही बात इस मामले में घटित हुई थी।"

26. हमारे समक्ष प्रस्तुत मामले में प्रत्यर्थियों का कहना यह है कि 5 वर्षों से अधिक समय तक ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित रहने का परिणाम पद के समपहरण किए जाने के अलावा यह भी होता है कि ऐसी अनुपस्थिति पेंशन रूल्स के नियम 46 के अधीन अवचार होता है जिसके कारण उक्त आफिसर पेंशन पाने का हकदार नहीं रह जाता। प्रत्यर्थियों ने यह बात स्वीकार की है कि पिटीशनर को प्रस्थापित आदेश के विरुद्ध हेतुक दर्शित करने का अवसर प्रदान नहीं किया गया था। इसलिए यह अनुच्छेद 311 का स्पष्ट अतिक्रमण है। इसका परिणाम यह हुआ कि इस आधार पर भी उक्त आदेश को अभिखण्डित करना पड़ेगा।

27. एक और प्रश्न तारीख 12 जून, 1968 वाले आदेश की वैधता के सम्बन्ध में है जिसे पेंशन रूल्स के नियम 46 के अधीन पारित किया जाना तात्पर्यित था। पिटीशनर ने तारीख 18 जुलाई, 1967 वाला एक पत्र जिसमें उसने शिक्षा निदेशक से यह प्रार्थना की कि उसे उसकी पेंशन संदत्त करने की व्यवस्था की जाए क्योंकि उसने अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर ली है। पिटीशनर की उक्त प्रार्थना के जवाब में तारीख 12 जून, 1968 वाला आदेश पारित किया गया था। इस आदेश में यह कथन किया गया कि पेंशन रूल्स के नियम 46 के अधीन विभाग पिटीशनर को पेंशन मंजूर करने में असमर्थ है। पेंशन रूल्स का नियम 46 निम्नलिखित रूप में है—

> "46. किसी ऐसे सरकारी सेवक को, जो अवचार, दिवालियापन या अदक्षता के कारण पदच्युत कर दिया गया है या हटा दिया गया है, कोई पेंशन मंजूर नहीं की जाएगी। किन्तु इस प्रकार पदच्युत किए गए या हटाए गए सरकारी सेवकों को अनुकम्पा भत्ता तब प्रदान किया जा सकता है जब वे विशेष कारणों से ऐसे भत्ते पाने के योग्य पाए जाएं परन्तु किसी सरकारी सेवक को अनुदत्त ऐसा भत्ता उस पेंशन के 2/3 से अधिक नहीं होगा जो उसे उस हालत में मिल सकती जब वह चिकित्सीय प्रमाणपत्र के आधार पर सेवा निवृत्त किया गया होता।"

28. यह दृष्टव्य है कि उक्त नियम के अधीन ऐसा सरकारी सेवक जो अवचार, दिवालियापन या अदक्षता के कारण पदच्युत कर दिया गया है या हटा दिया गया है, पेंशन पाने के योग्य नहीं है। प्रत्यर्थियों ने अपने प्रतिशपथपत्र में यह बात स्वीकार की है कि तारीख 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश जिसे सर्विस कोड के नियम 76 के अधीन पारित किया जाना तात्पर्यित था सेवा से हटाए जाने का आदेश है और प्रत्यर्थियों ने यह भी दलील दी है कि पिटीशनर का 5 वर्षों से अधिक समय तक ड्यूटी से अनुपस्थित रहना, स्वत: अवचार के और सेवा में अदक्षता है। हमने पहले ही यह अभिनिर्धारित किया है कि तारीख 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश अवैध है। यदि ऐसी बात है तो उसका यह परिणाम निकलता है कि पिटीशनर 5 वर्षों से अधिक समय तक ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित नहीं रहा और वह सेवा में किसी अवचार या अदक्षता का दोषी नहीं है। इसलिए इससे यह भी परिणाम निकलता है कि पेंशन रूल्स के नियम 46 के आधार पर तारीख 12 जून, 1968 वाले आदेश के अधीन पेंशन को रोक रखना अवैध है।

29. प्रत्यर्थियों का यह पक्षकथन नहीं है कि पिटीशनर जैसे आफिसर पेंशन के हकदार नहीं है। पेंशन रूल्स के नियम 49 के प्रति निर्देश करने से यह दर्शित है कि उस नियम में वर्णित आफिसर पेंशन के हकदार हैं। इस बात के बारे में कोई संविवाद नहीं है कि पिटीशनर बिहार शिक्षा सेवा के शिक्षा विभाग में एक आफिसर है। यह बात नियम 5 की अनुसूची की मद संख्या 3 में दी हुई है। नियम 42 में इस बात की घोषणा है कि प्रत्येक पेंशन के बारे में यह समझा जाएगा कि वह अध्याय 8 में अन्तर्विष्ट शर्तों के अध्यधीन मंजूर की गई है। प्रत्यर्थियों का यह पक्षकथन नहीं है कि अध्याय 8, जो पेंशनरों के पुर्नानियोजन के बारे में लागू होता है, प्रस्तुत मामले से किसी प्रकार भी सम्बद्ध है। हमने नियम 46 का पहले ही उल्लेख कर दिया है। उस नियम के अधीन ऐसा कोई सरकारी सेवक जो अवचार, दिवालियापन या अदक्षता के कारण पदच्युत कर दिया गया है या हटाया गया है, पेंशन पाने के योग्य नहीं है किन्तु उस नियम में यह स्पष्ट रूप से अनुध्यात है कि उस में वर्णित तीनों बातों के बारे में पदच्युत या हटाए जाने के रूप में कार्यवाही विधि के अनुसार पहले ही हो चुकी है। नियम 46 के अधीन जो वर्जन है वह तभी लागू होगा जब उस में वर्णित शर्तें पूरी हो जाती हैं। वास्तव में इस नियम के अधीन परिकल्पित परिणाम पहले की गई कार्यवाही के फलस्वरूप निकलते हैं। नियम 129 में यह उपबन्धित है कि ऐसे सरकारी सेवक अधिवार्षिकी पेंशन पाने के हकदार हैं जो किसी आयु प्राप्त कर लेने पर निवृत्त होने के लिए नियमों के अनुसार हकदार हैं या सेवा निवृत्त किए जाने के लिए मजबूर किए जा सकते हैं। नियम 134 में ऐसे सरकारी सेवक को सेवा निवृत्त का पेंशन संदाय करने की बात स्पष्ट की गई है जिसे 30 वर्षों की अर्हता प्राप्त सेवा पूरी कर लेने के पश्चात् या ऐसी कम अवधि की सेवा पूरी कर लेने के पश्चात्, जो सरकारी सेवकों के किसी विशेष वर्ग के लिए विहित की जाए, सेवा निवृत्त होने की अनुमति दी गई हो। नियम 135 में यह उपबन्धित है कि नियम 5 में वर्णित सरकारी सेवक 25 वर्ष से अन्यून वर्षों की अर्हता प्राप्त सेवा पूरी कर लेने के पश्चात् अपना त्यागपत्र देकर सेवा निवृत्त पेंशन पाने के तब हकदार होंगे जब कि उनका त्यागपत्र स्वीकार कर लिया जाएगा। नियम 5में वर्णित सरकारी सेवकों के पेंशन का मानक्रम नियम 146 में उपबन्धित है। हमने कुछ ही महत्वपूर्ण नियमों का निर्देश यह दर्शित करने के लिए किया है कि पेंशन का संदाय

राज्य के विवेकाधिकार पर निर्भर नहीं करता बल्कि इसकी बजाए शन का संदाय नियमों द्वारा शासित होता है। और नियमों के अन्तर्गत आने वाला सरकारी सेवक पेंशन का दावा करने के लिए हकदार है। तारीख 12 जून, 1968 वाला आदेश इस तथ्य के कारण अभिखण्डित करना पड़ेगा कि उक्त आदेश का आधार तारीख 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश है जिसे हमने अभिखण्डित कर दिया है। जब 5 अगस्त, 1966 वाला आदेश कायम नहीं रह सकता तब यह स्वाभाविक है कि तारीख 12 जून, 1968 वाला आदेश अपने आप निरसित हो जाएगा।

30. विचार किए जाने के लिए अन्तिम प्रश्न यह है कि क्या सरकारी सेवक द्वारा पेंशन प्राप्त करने का अधिकार सम्पत्ति है जिससे कि संविधान के अनुच्छेद 19(1)(च) और 31(1) लागू हो सकें। यह प्रश्न इस इस बात का विनिश्चय करने के लिए आवश्यक है कि क्या यह रिट पिटीशन अनुच्छेद 32 के अधीन कायम रह सकती है। इस पहलू पर हम पहले ही चर्चा कर चुके है और अब हम आगे इसी पर विचार करेंगे।

31. पिटीशनर का कहना यह है कि पेंशन प्राप्त करने का अधिकार संपत्ति है प्रत्यर्थियों ने तारीख 12 जून, 1968 वाले कार्यपालिक आदेश द्वारा उसकी पेंशन को दोषपूर्ण रूप से रोक रखा है। उस आदेश से संविधान के अनुच्छेद 19(1)(च) और (31)(1)के अधीन मूल अधिकारों का हनन होता है। जैसा कि हमने पहले बता दिया है कि प्रत्यर्थियों ने पिटीशनर के पेंशन प्राप्त करने के अधिकार पर विवाद नहीं उठाया है किन्तु 5 अगस्त, 1966 को पारित किए गए आदेश के आधार पर उसका विरोध किया है। प्रत्यर्थियों के प्रतिशपथपत्र में यह कोरा प्रकथन मात्र है कि किसी मूल अधिकार का प्रश्न विचारार्थ उठना ही नहीं है। प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउन्सेल श्री झा यह बात कहने के लिए तैयार नहीं थे कि पेंशन प्राप्त करने के अधिकार को किन्हीं भी परिस्थितियों में संपत्ति नहीं माना जा सकता। उनका कहना यह है कि इस मामले में राज्य ने पेंशन मंजूर करने का कोई आदेश पारित नहीं किया था। विद्वान् काउन्सेल ने जो तर्क पेश किया है उससे हम यह समझते हैं कि यदि राज्य ने पेंशन मंजूर करने का आदेश पारित किया होता और आगे चलकर उस आदेश का खंडन कर दिया होता तो उस पश्चात्वर्ती आदेश के बारे में यह समझा जाता कि उससे पिटीशनर के सम्पत्ति संबंधी अधिकार पर असर ऐसा पड़ा था जिससे कि संविधान के अनुच्छेद 19(1)(च) और 31(1) लागू होते।

32. हम प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउन्सेल की इस दलील से सहमत नहीं है। पेंशन रूल्स के तात्विक उपबन्धों का उल्लेख करके हमने पहले ही यह बता दिया है कि पेंशन की मंजूरी प्राधिकारियों द्वारा इस आशय का आदेश पारित किए जाने पर निर्भर नहीं है। यह हो सकता है कि सेवा की कालावधि और अन्य सुसंगत बातों पर ध्यान देकर मिलने वाली पेंशन की रकम के प्रयोजन के लिए प्राधिकारी इस आशय का आदेश पारित करें किन्तु आफिसर को पेंशन प्राप्त करने का अधिकार उक्त आदेश के द्वारा नहीं होता है बल्कि नियमों के बल पर होता है। हमने यह पहले ही बता दिया है कि पिटीशनर जैसे व्यक्तियों के लिए नियमों में वर्णित परिस्थितियों में पेंशन प्राप्त करने का अधिकार स्पष्ट रूप से मान्य है।

33. **भगवत सिंह** बनाम **भारत संघ** (1) के मामले में पंजाब उच्च न्यायालय के समक्ष यह प्रश्न विचारार्थ उठा था कि लोक सेवक को मंजूर की गई पेंशन ऐसी संम्पत्ति है या नहीं जिसे अनुच्छेद 31 (1) लागू होता है। उस मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ऐसा अधिकार सम्पत्ति है और इस अधिकार में किसी प्रकार के विघ्न से संविधान के अनुच्छेद 31 (1) का उल्लंघन होता है। आगे यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि राज्य कार्यपालिक आदेश से लोक सेवक के पेंशन प्राप्त करने के अधिकार को न तो कम कर सकती है और न बिल्कुल ही समाप्त कर सकती है। यह विनिश्चय विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा किया गया था। भारत संघ ने इस विनिश्चय की लैटर्स पेटेन्ट अपील की थी। लैटर्स पेटेन्ट न्यायपीठ ने **भारत संघ बनाम भगवन्त सिंह** (2) में अपने विनिश्चय विद्वान् एकल न्यायाधीश के विनिश्चय का अनुमोदन किया था। लैटर्स पेटेन्ट न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया था कि लोक सेवक को उसकी सेवा निवृत्ति पर मंजूर किया गया पेंशन संविधान के अनुच्छेद 31 (1) के अर्थान्तिर्गत संपत्ति है और उसको इस अधिकार से वंचित विधि के प्राधिकार से ही किया जा सकता है और केवल इंकार किए जाने या रद्द किए जाने के कारण से ही ऐसे पेंशन का सम्पत्ति का स्वरूप समाप्त नहीं हो जाता। आगे यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि किसी विशिष्ट व्यक्ति या प्राधिकारी के मनमानेपन पर ऐसी पेंशन के सम्पत्ति के स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं हो सकता।

34. इसी विषय पर पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ ने **के०आर०एरि** बनाम **पंजाब राज्य** (3) में विचार किया था। उस न्यायालय को एक आफिसर के पेंशन प्राप्त करने के अधिकार के स्वरूप पर विचार करना था। न्यायाधीशों ने बहुमत से इसी उच्च न्यायालय के पूर्वतर दो विनिश्चयों में अधिकथित सिद्धान्तों का अनुमोदन करते हुए उद्धधरण दिया था। इन दोनों मामलों का ऊपर उल्लेख कर दिया गया है। पूर्ण न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया था कि पेंशन को सरकार की मर्जी और प्रसाद पर दिया जाने वाला दान नहीं समझा जाना चाहिए और अधिवार्षिकी पेंशन का अधिकार, जिसमें पेंशन की रकम भी शामिल है, सरकारी सेवक में निहित एक मूल्यवान अधिकार है बहुमत से आगे यह भी अभिनिर्धारित किया था कि यद्यपि आफिसर को पहले यह अवसर प्रदान किया गया था कि वह अपनी ओर से की गई त्रुटि या अवचार के लिए शास्ति अधिरोपित किए जाने के खिलाफ हेतुकदर्शित करे, फिर भी जब ऐसे आफिसर की संदेय पेंशन की मात्रा में ऐसे अवचार के आधार पर, जो उसके विरुद्ध पहले ही साबित हो चुका है, कमी की जाती है तो ऐसे आफिसर को इस सम्बन्ध में हेतुकदर्शित करने के लिए और अवसर अवश्य प्रदान करना चाहिए। विद्वान् न्यायाधीशों ने ऐसा और अवसर प्रदान किए जाने के सम्बन्ध में जो विचार व्यक्त किया था वह सुसंगत पंजाब सिविल सर्विस रूल्स के आधार पर था। किन्तु विद्वान् मुख्य न्यायाधीश अपने विस्समत निर्णय में बहुमत की इस राय से सहमत नहीं थे कि आफिसर को ऐसी परिस्थितियों में, जब कि राज्य द्वारा उसे संदेय पेंशन

---

(1) ए० आई० आर० 1962 पंजाब 503.

(2) आई० एल० आर० 1965 पंजाब 1.

(3) आई० एल० आर० 1967 पंजाब और हरियाणा 28.

की रकम में कमी कर दी गई है और अवसर प्रदान किया जाए। प्रस्तुत मामले में हमारे लिए यह आवश्यक नहीं है कि हम इस प्रश्न पर विचार करें कि पिटीशनर के विरुद्ध की गई अनुशासनिक कार्यवाही के आधार पर उसके पेंशन में कमी की जाने या पेंशन इंकार किए जाने की कार्यवाही करने से पहले उसे हेतुक दर्शित करने का और नोटिस दिया जाना चाहिए था। यह प्रश्न हमारे समक्ष प्रस्तुत मामले में विचार के लिए उठता ही नहीं है। हमें इस प्रश्न से भी सरोकार नहीं है कि आफिसर की सेवा निवृत्ति के पश्चात् पहली बार पेंशन कम करने या रोक रखने से पहले प्राधिकारियों को कौन सी प्रक्रिया, यदि कोई है तो, अपनानी चाहिए थी, इसलिए हम पंजाब उच्च न्यायालय के उक्त विनिश्चय में न्यायाधीशों के बहुमत और अल्पमत द्वारा व्यक्त विचारों के बारे में कोई राय व्यक्त नहीं कर रहे हैं। किन्तु हम न्यायाधीशों के बहुमत द्वारा उसके पूर्वत्तर विनिश्चय का अनुमोदन करने के इस विचार से सहमत हैं कि पेंशन ऐसा दान नहीं है जो सरकार की मर्जी और प्रसाद पर संदेय हो बल्कि पेंशन का अधिकार सरकारी सेवक में निहित एक मूल्यवान अधिकार है।

35. मध्य प्रदेश बनाम रणोजीराव शिन्दे और एक अन्य (1) में इस न्यायालय को इस प्रश्न पर विचार करना पड़ा था कि क्या नकद अनुदान संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (च) और 31 (1) की पदावली के अर्थान्तर्गत सम्पत्ति है। इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त करते हुए कि "यह स्पष्ट है कि धनराशि पाने का अधिकार सम्पत्ति है" अभिनिर्धारित किया था कि नकद अनुदान सम्पत्ति है।

36. उपर्युक्त विनिश्चयों को ध्यान में रखते हुए हमारी यह राय है कि पेंशन प्राप्त करने का पिटीशनर का अधिकार अनुच्छेद 31 (1) के अधीन सम्पत्ति है और राज्य को केवल कार्यपालिक आदेश द्वारा इसे रोक रखने की कोई शक्ति प्राप्त नहीं है। इसी प्रकार उक्त दावा अनुच्छेद 19 (1) (च) के अधीन भी सम्पत्ति है और इसे अनुच्छेद 19 के उपअनुच्छेद (5) द्वारा कोई व्यावृत्ति प्राप्त नहीं है। इसलिए यह परिणाम निकलता है कि पिटीशनर को पेंशन प्राप्त करने के अधिकार से वंचित करने का तारीख 12 जून, 1968 वाला आदेश संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (च) और 31 (1) के अधीन पिटीशनर के मूल अधिकारों को प्रभावित करता है और इस प्रकार संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन यह पिटीशन कायम रह सकती है। यह सम्भव है कि पेंशन ऐक्ट, 1871 का 23, के अधीन सिविल न्यायालय को इस अधिनियम में वर्णित विषयों से सम्बद्ध किसी बात पर विचार करने का वर्जन हो। किन्तु इससे राज्य के विरुद्ध इस बात के लिए मेंडेमस का रिट जारी करने में कोई बाधा नहीं पड़ती है कि राज्य विधि के अनुसार पेंशन के संदाय के बारे में पिटीशनर के दावे पर समुचित विचार करे।

37. निष्कर्ष यह है कि तारीख 2 सितम्बर, 1953 और 5 मार्च, 1960 वाले आदेशों के बारे में कोई अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता क्योंकि इस बात का निर्णय 1967 की द्वितीय अपील संख्या 640 में पटना उच्च न्यायालय के तारीख 4 मार्च, 1967 वाले विनिश्चय में किया जा चुका है। यह उपधारणा कर लेने पर भी कि

---

(1) (1968) 3 एस० सी० आर० 489.

पिटीशनर की यह दलील कि तारीख 2 सितम्बर, 1953 वाला आदेश उस मुकदमे में, जिसकी द्वितीय अपील उच्च न्यायालय में विनिश्चय के लिए की गई थी, अभिनिर्णय का विषय नहीं था, तो भी कोई अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता क्योंकि यह आदेश बहुत पहले 1953 में पारित किया गया था। यह भी बात है कि पिटीशनर ने उक्त आदेश के रद्द किए जाने के लिए जो अभ्यावेदन किए थे वे बहुत पहले ही नामंजूर कर दिए थे और उस आदेश से पिटीशनर के किसी मूल अधिकार का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है। तारीख 5 अगस्त, 1966 वाला यह आदेश जिसमें यह घोषणा की गई थी कि पिटीशनर सरकारी नियोजन में नहीं रह गया है, अपास्त और अभिखण्डित किया जाता है। तारीख 12 जून, 1968 वाला वह आदेश, जिसमें यह कथन किया गया है कि पेंशन रूल्स के नियम 46 के अधीन विभाग पिटीशनर को पेंशन मंजूर करने में असमर्थ है, भी अपास्त और अभिखंडित किया जाता है। क्योंकि पिटीशनर ने स्वयं यह दावा किया है कि वह अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर लेने पर सेवा से निवृत्त कर दिया गया है, इसलिए मैंडेमस का रिट प्रत्यर्थियों पर इस निदेश के साथ जारी किया जाएगा कि वे विधि के अनुसार पेंशन संदाय करने के लिए पिटीशनर के दावे पर विचार करें। ऊपर जो कुछ बताया गया है उस विस्तार तक पिटीशनर का रिट पिटीशन मंजूर किया जाता है। पिटीशनर प्रथम प्रत्यर्थी बिहार राज्य से अपना खर्चा पाने के लिए हकदार है।

रिट पिटीशन भागतः मंजूर किया गया।

वि०